गुरुवाणी

संत पुरुष का सान्निध्य बड़ा ही फलकारी होता है। इससे ऊर्जा का संचार होता है, विचारों में नवीनता आती है, राष्ट्र एवं समाज के कल्याण के प्रति सोच निर्मित होती है और सबसे अधिक तो अपने जीवन की सार्थकता होती है।

–पीठाधीश्वर बाबा सिद्धार्थ गौतम राम जी

अघोरेश्वर निनाद

अघोरान्ना परो मंत्रो। नास्ति तत्वम् गुरोः परम्।।

R.N.I.UPHIN-2000/3008 Postal No. VSI-E-01/2013-2015

वर्ष-१५, अंक १०, वाराणसी। शनिवार ३० मई २०१५ ई० सहयोग राशि ४.२५

भाव

शब्द भाव का हमारे जीवन में बड़ा ही व्यापक प्रभाव है। भाव से व्यक्ति के व्यक्तित्व के विषय में जाना जा सकता है। कहा जाता है कि चेहरे के भाव, भंगिमाओं से प्रत्येक व्यक्ति का स्वभाव उसके मौन रहने के बावजूद प्रकट हो जाता है तथा उनके सम्पर्क में आने वाला प्राणी चाहे पशु पक्षी ही क्यों न हो अवश्य ही प्रभावित अथवा कुप्रभावित होता है एवं मन के भाव को मन के विचार को वह समझ लेता है। इसलिये कहा गया है कि ''हित अनहित पशु-पक्षी जाने'' जिससे भाव से ही प्रभामण्डल की रश्मियों का प्रस्फुटन होता है। भाव का सीधा अर्थ है एक व्यक्ति विशेष का वास्तविक स्वभाव जिसका समाज उसे पहचान देता है। स्व का मतलब है अपना एवं भाव यानि अपना वास्तविक स्वरूप जिसे हम स्वभाव या चरित्र की संज्ञा से भी आच्छादित कर सकते हैं। कोई व्यक्ति तमोगुणी, रजोगुणी, तामसी है या सतोगुणी है इसका पता उसके मन के हृदय के भाव से लग जाता है। एक तरह से कहा जाय कि व्यक्ति का भाव जैसा होता है उसे जीवन में ऐसी ही स्थिति, परिस्थिति से रूबरू होना पड़ता है। यदि अच्छी भावना के साथ किसी को नींद नहीं आती हैं तो निश्चित ही प्रात: की रश्मियों से नींद के भाव से जागने के पश्चात् उसके अन्तरंग प्रस्फुटित नहीं हो पाते। नैसर्गिक विचार का उदय नहीं हो पाता। वह अतीत के उलझनों को लेकर तथा भविष्य की चिन्ता को लेकर उहापोह में पड़ा रहता है। जबकि वर्तमान का उपभोग एवं इसके विराट आयामों से वह सर्वथा वंचित बना रहता है। ऐसा व्यक्ति छोटी-छोटी बातों में ही उलझकर रह जाता है। अस्तु, किसी भी तरह निरन्तर प्रयास के द्वारा सच्चे बुद्धिजीवी को अपने सद्भाव को जाग्रत रखना पड़ता है। जिससे वह अतुल्य, अतीव, ईश्वरीय शक्ति का आनन्द उपभोग कर सके। उस परम सत्ता के साम्राज्य का सार्थक सहभागी बने। उसमें हिस्सा बटाने के लिये अधिकृत हो तथा जीवन में सकारात्मकता की संजीवनी का भरपूर उपभोग कर सके।

अच्छे भाव का स्वामी, साधु भाव का स्वामी, परम विनीत, सरल बन जाते हैं। यदि कोई व्यक्ति जाने अनजाने में भी किसी महात्मा, सच्चे सन्त के सम्पर्क में आ जाता है। सर्वप्रथम उस महान आत्मा के चारों तरफ प्रखरता से फैली जाग्रत भाव आभा मण्डल से ही प्रभावित हो जाता है। उसे अपनापन सा महसूस होने लगता है। एक चुम्बकीय खिंचाव से आकर्षित होता रहता है एवं अन्ततः उसके मानस पटल पर इस अदम्य सुख का स्थायी प्रभाव हो जाता है। इसीलिये एक बार ही उस चुम्बकत्व के प्रभा मण्डल से प्रभावित होने पर वह सदा-सदा के लिये एक सुखद अनुभूति का अनुभव करता रहता है। यही भाव सच्चे गुरु के प्रति भी उत्पन्न होता है। जिसमें कहीं किसी बिन्दु पर तनिक भी संदेह की गुजांइश नहीं होती। ऐसा सुपात्र व्यक्ति का जीवन धन्य हो जाता है। उसमें एक असीम ऊर्जा निर्भीकता, आशा का संचार घर करने लगता है। वह शनैः शनैः दु:ख के कारण का त्याग यानि राग, द्वेष, मोह आदि से अपने को पृथक् करने लगता है। उसके भाव एवं प्रवृत्ति में एक स्थायी परिवर्तन प्रारम्भ हो जाता है। चित्त के विकारों के प्रति वह सावधान रहता है। यदि कदाचित् कभी विकार का शिकार हो भी जाये तो वह अफसोस, ग्लानि से भर उठता है तथा तत्काल परिष्कार करके पुनः पवित्रता के भाव भरे पथ का अनुसरण करता है। उसके मन की चंचलता, आतुरता कम होती जाती है तथा सद्भाव भरे विचार की पुष्टि होने लगती है। जिससे बरबस देवत्व की प्राप्ति की ओर अग्रसर होता है। जबकि एक दुर्भावना में पड़ा व्यक्ति निराश, दु:खी एवं जीवन के क्षणों को व्यर्थ में संताप में बिताने के लिये बाध्य होता है तथा ऐसा व्यक्ति निराशा के आगोश में पड़ी हुई उस खामोश, निरीह चिड़िया की तरह हो जाता है, जिसके मजबूत पंखों के होते हुए वह उसका सदुपयोग न कर संतप्ता में पड़ी होती है। जबकि अच्छे भाव से भरा व्यक्ति क्षणिक दु:ख-सुख की परवाह न करते हुए **''सुखे दु:खे समेकृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ''** की भावना से भरा रहता है अर्थात् वह हर स्थिति में वह साम्यता बनाये रखता है। जिससे उसके ऊपर उसके परिवार के प्रति उस हैतुकी अघोरेश्वर की सद्कृपा का सद्भाव बना रहता है। ऐसे व्यक्ति स्वयं एवं अपने परिवार के सदस्यों के बीच संतुष्टि का भाव बिखेरता है। जिससे एक आत्मसंतोष की झलक उसके चेहरे पर निरन्तर परिलक्षित होती रहती है तथा वह विजेता की भाँति जीवन जीता हुआ चला जाता है। ऐसा ही व्यक्ति आन्तरिक रूप से परहितार्थ हेतु तत्पर रहते हैं। जिससे अपने आप सबका भला होता रहता है। फलस्वरूप ऐसा व्यक्ति अपने आप उन्नति के शिखर की ओर बढ़ते जाते हैं। यही भाव महापुरुषों सद्भावी व्यक्तियों में होता आया है। ऐसे मनीषी पर पीड़ा के उद्धारक बनकर परहितार्थ में अपने को समर्थ एवं समर्पित पाते हैं। हर प्राणी के प्रति उनका दयार्द भाव होता है। उनके भाव में करुणा होती है, शीतलता होती है। वे क्षमा करते एवं पीड़ा को भूलते हुए आगे बढ़ते रहते हैं तथा अंग्रेजी में **''फारगिव एण्ड फारगेट''** के सिद्धान्त के पोषक होते हैं। ऐसे ही व्यक्ति सच्चे अर्थों में ब्रह्मोपासक कहे जाते हैं। वे दूसरे के लिये प्रगति का मार्ग प्रशस्त करते हैं। प्रसन्नता बाँटते चलते हैं एवं विश्वास दिलाते हैं। यदि हममें सतत ऊँचा उठने की उत्कट उत्कंठा है तो सुख-दु:ख हमारा मार्ग कत्तई अवरुद्ध नहीं कर सकता। निराशा के बादल निश्चित ही छंट जाते है। जबकि अपने को मात्र कोसते रहना, अपनी ही बुराईयों से स्वयं खिन्न होते रहना बड़ा ही दुर्भाग्यपूर्ण है और सामान्य मानव के लिये अक्षम्य अपराध जैसा है। जिससे खुले नीले मुक्त गगन में यदि पखेरू परवाज न करें तो वह वाकई उसका दुर्भाग्य है क्योंकि जो खग एक प्राकृतिक चहचहाहट के साथ ऊँची उड़ान नहीं भर सकता। वह वाकई जीवन के उस आनन्द का उपभोग नहीं कर सकता जिसके लिये वह बना है। अत: सरलतम विधि यह है कि हमारी अच्छी भावना होने पर असीम शक्ति पुंज से हम लबरेज हो जाते हैं। रचनात्मक, शुभ कार्य के लिये अपने साथ अपने सन्तति के वास्तविक विकास के लिये हमें अपने आपकी भावना को निखारना पड़ेगा। जिससे हमारी मानसिक उन्नति होती जायेगी एवं दुर्भावनाओं, मानसिक अन्तर्द्वन्द्वों से अपने को छुड़ाते हुए एक शान्त चित्त गम्भीर दृष्टिकोण अपनाना होगा जिससे वांछित अभीष्ट की उपलब्धि स्वमेव होती जायेगी। यह भी सत्य है कि सही-सही दिशा निर्देशन के अभाव में मनुष्य अपने विचारों में परिवर्तन नहीं कर पाता बल्कि परछिद्रान्वेषण तथा आपसी कलह, निन्दा में जीवन का अमूल्य समय बिता देता है। इसीलिये सत्यद्रष्टा, सन्तों, मनीषियों,

शेष पृष्ठ दो पर

गृहास्थाश्रम

गृहस्थाश्रम को सभी आश्रमों में श्रेष्ठ माना गया है यही आश्रम सृष्टि सृजन एवं उसके नियमन का मूल आधार है। आज तक बड़े से बड़े योगी, तपस्वी, मनीषी गृहस्थाश्रम की ही उपज रहे हैं। मनुष्य के जन्म, पालन-पोषण से लेकर संस्कार एवं दुनियादारी की संस्कृति का उद्गम स्थल गृहस्थाश्रम ही है। कहा जाता है कि मनुष्य का प्रथम पाठशाला उसका गृह होता है एवं सबसे प्रभावी संस्कार बच्चों को उनके प्रारम्भिक जीवन यानी पाँच वर्ष की अवस्था तक में अचेतन मस्तिष्क में अमिट रूप से अप्रत्यक्ष रूप से प्रदत्त हो जाता है। यानी परिवार के मध्य ही उसके सर्वांगीण विकास अथवा पतन की नींव पड़ जाती है। जिसका प्रभाव जीवन-पर्यन्त मनुष्य के जीवन पर पड़ना अपरिहार्य होता है।

गृहस्थी की गाड़ी के पहिये के रूप में घर-परिवार में नर-नारी का संगठनात्मक रूप देखने में आता है, जिसे विशेषकर भारतवर्ष में कुछ काल पूर्व तक संयुक्त परिवार के रूप में पाया जाता था, जिसमें सभी वृद्ध से लेकर बच्चे तक एक सूत्र में बँधे रहते थे, सबका अपनी उम्र, तर्जुबा, ज्येष्ठता के क्रम से घर-परिवार में उपादेयता होती थी। जिसका लाभ कुछ सौभाग्यशाली एवं संस्कारी परिवार आज भी लेते है। संयुक्त परिवार या संयुक्त गृहस्थी धरती पर स्वर्ग के सदृश्य होता है, जिसमें प्राकृतिक रूप से सपरिवार के किसी व्यक्ति पर आने वाली अचानक विपत्ति या बाधा का सामना सभी जन एक साथ कर लेते है एवं परिवार का कोई सदस्य अलग-थलग या एकाकी महसूस नहीं करता, इस प्रकार थोड़े समय में ही वह उससे निवृत्त हो परिवार के सहकार, सहयोग, साहचर्य का भरापूरा लाभ लेता। गृहस्थाश्रम या पारिवारिक जीवन को कतिपय मनुष्य झंझटों, माया के बाजार के रूप में देखते हैं लेकिन गृहस्थाश्रम या पारिवारिक जीवन में दोष नहीं है, दोष तो अपने दृष्टिकोण का है, राजा जनक एवं ऋषि-महर्षि तक पारिवारिक जीवन बड़े ही सात्विकता, सच्चरित्रता के साथ व्यतीत करते थे एवं समाज को लाभ प्रदान करते थे।

जो मनुष्य एक आश्रम यानी गृहस्थी से पलायन कर दूसरे वृत्ति अथवा अन्य प्रकार के जीवन को सुविधानुरूप पाकर अपनाता है एवं गृहस्थी के संघर्ष की चुनौती से घबराकर उससे अनिच्छा जाहिर करता है, वह वास्तव में पलायनवादिता का पोषक है। यदि व्यक्ति चाहे सन्यास आश्रम में ही होने का दावा करे परन्तु मन में अपवित्रता, काम, क्रोधाग्नि की ज्वाला कहीं न कहीं सुलग रही है, तो वह वास्तव में किसी आश्रम के लिये उपयुक्त नहीं है। वास्तविक सत्य यही है कि व्यक्ति की अन्तदृष्टि कैसी है? उसकी भावना कैसी है? यदि समाज के उत्थान के लिए एक सन्यासी भिक्षाटन करे तथा धनलोलुपता की प्रवृत्ति, लिप्सा की स्थिति यदि बनी रहे, तो वह अकारथ होता है, निष्प्रयोज्य हो जाता है क्योंकि गृहस्थी में रमण करते हुए, अपने विहित कर्त्तव्यों का पालन करते हुए अपने परिजनों, पालकों, इष्ट मित्रों का, साधु संतों की हम सेवा करते रहे तो सबसे बड़ा धर्म यही होता है।

अधिकतर लोगों की यह धारणा होती है कि गृहस्थ आश्रम में नाना प्रकार की कठिनाईयों से हमें दो चार होना पड़ता है जबकि गृहस्थी के भार को ढ़ोने में एक वीरता का अनुभव होता है उसमें एक असीम आनन्द की अनुभूति होती है। गृहस्थी की जिन्दगी एक प्रतियोगी परीक्षा की तरह होती है, जिसमें प्रकृति के द्वारा हमें ठोक बजाकर हर स्थिति, परिस्थिति में हमें कसौटी पर कसकर खरा उतारा जाता है, कठिन प्रशिक्षण परीक्षण के दौर से गुजारा जाता है ताकि जीवन संघर्ष के अन्तर्गत पीठ में धूल न लगे हम धराशायी न हो, परस्पर एक दूसरे के सदस्यों के प्रति अपनापन बढ़ता जाय एवं पृथ्वी पर स्वर्ग की अनुभूति हो सके।

दुर्भाग्य से आज के फैशनपरस्ती आधुनिकता के दौर में हम अपने संयुक्त परिवार के आनन्द से वंचित होते जा रहे हैं। फलस्वरूप इसका कुप्रभाव बच्चों पर अत्यधिक पड़ता है जो अनजाने में ही टी०वी०, इन्टरनेट आदि से जुड़कर कुसंस्कारों का शिकार हो जाते हैं जिससे कालान्तर में यौन-हिंसा, अविश्वास, एकाकीपन के संकट में पड़कर जीवन बर्बाद कर लेते हैं। अस्तु, आवश्यक है कि प्रत्येक परिवार के गृहस्थी की गाड़ी संयुक्त परिवार के सुरक्षित पटरी पर गमन करती रहे।

C-अघोराचार्य बाबा कीनाराम अघोर शोध एवं सेवा संस्थान् के लिये प्रकाशक एवं मुद्रक **अरुण कुमार सिंह** द्वारा महादेव प्रेस, बी.3/335, रविन्द्रपुरी कॉलोनी, भेलूपुर, वाराणसी (उ0प्र0) से मुद्रित एवं प्रकाशित।

सम्पादक : चन्द्र नाथ ओझा

ग्राफिक्स : आशीष कुमार बरनवाल

☎ **0542-2277155.**
e-mail–kinaram@rediffmail.com
www.aghorpeeth.org

प्रथम पृष्ठ का शेष

भाव

औघड़ अघोरेश्वर के द्वारा नि:सृत वाणियों, उनके द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों, पथों का अनुसरण कर हम सहज में ही वह सब प्राप्त कर सकते हैं। जिसके लिये हम वास्तव में अधिकृत है तथा इस प्रकार हमारे जीवन में एक दिव्य ज्योति का प्रज्वलन होगा। फलत: हमारा हृदय संतुष्ट, शान्तचित्त, एकाकार होने का अनुभव करेगा। अघोरेश्वर के अनुयायियों की भावना हठधर्म में विश्वास नहीं करती। न तो किसी धर्म विशेष के प्रति ही वे उन्मुख होते हैं। उनका विश्वास मानवता की तृप्ति उनको शान्ति, संतुष्टि देने वाले विचार शैली में ही होता है न कि शैव, शाक्त, वैष्णव, ईसाई, कट्टर मुस्लिम पंथों के अनुसरण करने में।

ऐसे मानव के हृदय से उपजा भाव कभी बनावटी नहीं होता जैसे सांस लेना बनावटी नहीं। उसी प्रकार भाव की अभिव्यक्ति भी बनावटी या कृत्रिमता लिये नहीं हो सकती। क्योंकि लेशमात्र भी बनावट है तो वह छल प्रपंच की श्रेणी में आ जाता है तथा भाव कुभाव की श्रेणी में।

चाहे व्यक्ति की वेशभूषा कैसी भी हो वह चाहे जितना भी स्वांग कर लें परन्तु वास्तविकता तो वास्तविकता रहती है। मुनि के वेष में यदि कपटी उपस्थित होता है तो एक समय सीमा के बाद **''मुनि न होंहि यह निश्चर घोरा''** की संज्ञा से युक्त हो जाता है। यहाँ तक की मात्र विद्याध्ययन से कोई भावनाशील नहीं हो सकता। असली भाव तो आचरण में होता है। जैसे माँ का अपने बच्चे के प्रति या बालक का अपने माँ के प्रति या गौ का बछड़े या बछड़े का गौ के प्रति भाव। भावनाशील या अच्छे भावों का सम्बन्ध किसी जाति विशेष, पंथ विशेष से नहीं होता बल्कि यह भावना से बनता है। जैसे गुरु पूर्णिमा के अवसर पर गुरु के समक्ष गुरुद्वारा में, गुरुगोष्ठी में उपस्थित हजारों हजार दूरदराज से आये हुए श्रद्धालु एक दूसरे के गुरु भाई या गुरु बहन ही होते हैं। उनके मध्य परस्पर सहयोग की भावना हिलोरे मारती रहती है। सौहार्द्र का भाव बढ़ता ही जाता है और इस प्रकार एक नैसर्गिक परस्परता का वातावरण साम्यता या समानता का निर्माण करती हैं। सद्गुरु जब भाव भरे दृष्टि से श्रद्धालुओं को देखते हैं तो प्रत्येक व्यक्ति के लिये उसी के अनुकूल वातावरण सृजित हो जाता है और उसकी आत्मा पवित्रता से भर जाती है। सरस जीवन जीने की ओर आकर्षित हो जाती है उसके जीवन में आशा का एक संचार होने लगता है। वह एक विद्रूप अंधकार से प्रात: की ओर बढ़ने लगता है।

अत: मानव के जीवन में व्यवहारिक रूप से सद्भाव भरने के लिये अपने को दुर्गुणों से दूर करने के लिये सरल उपाय यह है कि हम अपने मन के भावों को ईमानदारी से सद्प्रवृत्ति की ओर लगाते चले जायें। बाधाओं से न घबरायें। दिन प्रतिदिन विकास की ओर बढ़ने के लिये शक्ति को संजोकर अपने पथ पर दृढ़ता से कदम बढ़ाते चले जायें। हमारी उदात्त भावना इतनी प्रबल होनी चाहिये हमारा विश्वास इतना अकाट्य होना चाहिये जिससे सिद्धि मिलने में किंचित संदेह का समावेश न हो सके। यह सत्य है कि बिना कष्ट के किसी भी अभीष्ट की प्राप्ति हो ही नहीं सकती। परन्तु उस प्रयत्न में कष्ट उठाने में हमें निर्विवाद रूप से एक प्रसन्नता, एक आनन्द की अनुभूति होनी चाहिये। हममें असीम ऊर्जा का संचरण होता रहना चाहिये। जिससे आप देखेंगे कि संसाधनों की उपलब्धि समग्र रूप में अपने आप होती जायेगी। जिससे आप न केवल अपने भाव को कार्य रूप में परिणित करने में सक्षम होंगे बल्कि आपका व्यक्तित्व एक करिश्माई व्यक्तित्व होता चला जायेगा। बस, इसके लिये आवश्यक है कि हम अपने पथ को सदैव याद रखें एवं प्रार्थना के साथ, विनीत भाव के साथ प्रयत्नों में जरा सा भी आलस्य, प्रमाद अथवा विलम्ब न आने दें। मन में अच्छी भावना रखकर ईश्वर, औघड़ अघोरेश्वर को धन्यवाद देते रहे। उनकी कृपा के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करते रहे ताकि वे सतत हमें सद्भावना के पथ पर अग्रसर करने की शक्ति प्रदान करें। यह भाव मन में आते ही हमारा कषाय कल्मष अपने आप तिरोहित होता चला जायेगा। एवं हमारी शक्ति एक मंत्र की तरह कार्य करेगी। जिससे प्रयत्नों में चार चाँद लग जायेगा। कहा भी गया है कि- **मंत्र महामणि विषभ व्याल के, मेटति अति कुअंक भाल के।।** यानि निरन्तर प्रयत्न के प्रभाव से क्या नहीं हो सकता। यही गुरुमंत्र, गुरुसत्ता, गुरुशक्ति के जपने का प्रभाव होता है। जिससे निश्चित रूप से हमारा जीवन धन्य होगा, हमारा भाव परिष्कृत होगा तथा दसों दिशा में मंगलकारी मार्ग प्रशस्त होता जायेगा।

यद्यपि मनुष्य के द्वारा त्रुटि किया जाना स्वाभाविक है। परन्तु यदि त्रुटि का परिमार्जन उसके द्वारा सावधानी से किया जाता रहेगा तो वह जन्म जन्मान्तर के न केवल कुसंस्कारों पर विजय प्राप्त करेगा बल्कि वह अपने को शान्त भाव, शान्त स्वभाव का स्वामी बना लेगा। उसे आत्मसंतोष की अद्भुत पूँजी प्राप्त हो जायेगी जिससे उसका मानव जीवन कृतार्थ हो जायेगा। उसके कुभाव सद्भावों में बदल जायेंगे एवं तुलसीदास जी द्वारा रचित चौपाई **''भाव कुभाव अनख आलसहूँ, नाम जपत मंगल दिसी दसहूँ''** का अधिकारी होकर रहेगा।

भेदबुद्धिवश भिन्न दिखाई देते हैं गुरु और गोविन्द

ओंकार अल्लह-नूर सन्त कर्तार हैं सरकार
बातिन जाहिर साकार व निरंकार हैं सरकार।
कायानात को कायामत से महफूज की खातिर,
पैगाम ए खुदारब्ब औलिया अवतार हैं सरकार।
अतीशे-धुनि पाक-खाक को सिर से लगाइए,
इल्मे मंजिल मकसूद विवेकसार हैं सरकार।
सच्चा दरबार हैं क्रींकुण्ड सूफी-जाहिदी हैं वास्ते
रौनक अफरोज तख्त पर पीर सिद्धार्थ हैं सरकार।
दरवेश दरिया दिल में है पैबस्त गमे-आलम,
वली अली मलंग सदा बहार हैं सरकार।
रौशन हैं सम्सो-कमर जिनके नूरे-श्रम से,
जख्मो मरहम मर्जो-दवा हैं फतह-हार हैं सरकार।
दत्त-कालू-कीना भगवान राम नानक, गोविन्द हैं,
वाहिद सिद्धार्थ गौतम खुद मुख्तार हैं सरकार।
जाहिलियत जलालत दहशत या सितम
तारीक ए जूर्म से जंग को हरदम तैयार हैं सरकार।
माता-पिता दाता हैं दोस्त भाई बिरादर हैं सबके,
'परमार' की किश्ती के खेवनहार हैं सरकार।

सदाशिव की विग्रह त्रिशक्तियों की अनुभूति जब अभिन्न होकर एकाकार हो जाए, तब जीव घोर से अघोर स्थूल से सूक्ष्म, प्रकृति से परा व अपरा प्रकृति का साक्षात्कार करता है। अविद्या तमिस्रा से विद्या-आलोक पथ द्रष्टा व पथिक एकाकार हो जाते हैं। बहरहाल, गुरु व गोविन्द अभिन्नता को प्राप्त करते हैं। स्वयं अघोराचार्य बाबा कीनाराम जी ने बाबा कालू राम जी के साथ एकाकार एवं अभिन्न होने पर कहा—

कीना-कीना सब कहै, कालू कहै न कोए।।
कालू-कीना एक भयो राम करैं सो होए।।

इस दृष्टि से बड़े सरकार माँ गुरु एवं पूज्यपाद वरेण्य पीठाधीश्वर अभिन्न हैं। अभिन्नता को साक्षात्कारार्थ यदि वर्तमान सरकार दिव्य दृष्टि प्रदान करें। तभी दुविधा द्वैत के तिरोहन के बाद सांड पर आरोहित औघड़ेश्वर महाकपालेश्वर सदाशिव सिद्धार्थ गौतम राम जी अपने सर्वस्वरूप संग्रह रूप में दर्शन देंगे।

सम्भवामी युगे-युगे- सृष्टिकर्ता अपने विधानुसार स्वयं विभिन्न संस्थाओं एवं योनियों में अवतरित होकर पुन: ब्रह्माण्ड खप्पड़ में प्रविष्ट होकर नेपथ्य से प्राणियों की भूमिका का निदेशन करता है। इस्लाम व मुसलमान के किरदार बन दहशतगर्दी, वैदिक, आडम्बराचरण जब चरम सीमा पर पहुँचा तो सोलहवीं शताब्दी में सदाशिव कीनाराम की संज्ञा में आये और अघोर पथ सर्वसुलभ बनायें। बाल रूप में क्रींकुण्ड अघोर तख्त पर ११वें रूप में आगमन की घोषणा स्वरूप २०वीं शताब्दी में सदाशिव भगवान संज्ञा से अवतरित हुए किन्तु सृष्टा के साथ संहार व जीर्णोद्धार में युवावस्था में आ गये। १ मई १९६९ को 'एको अहम् बहुस्यामी' उपनिषदीय उक्ति (छ: माह के बाल भैरव माँ गुरु की गोद में आ गये) सत्य सिद्ध हुआ। बहरहाल एकोअहम् द्वितीय नास्ति और एकोअहम् बहुस्यामी रहस्य बन गया।

पृष्ठभूमि बन चुकी थी- दत्तात्रेय स्वरूप अघोरी बाबा राजेश्वर राम के कपाल खप्पड़ में बेचैनी के साथ महादेव के अवतरण की भूमिका सहित पृष्ठभूमि बन चुकी थी। पड़ाव आश्रम, सोगड़ा आश्रम निर्माण के बाद अघोर भक्तों ने बड़े सरकार में माँ गुरु व शिव शक्ति का साक्षात्कार किया था। भगवान लीलामृत के पृष्ठ संख्या ९०-९१ के अनुसार बड़े सरकार के काली रूप का दर्शन दर्जनों अघोर भक्तों ने किया था। १९६९ में बड़े सरकार की दिव्य ज्योति शिशु रूप धारण कीं। कतिपय भक्तों ने माँ गुरु द्वारा बाबा भैरव को स्तनपान कराते हुए दर्शन किया।

एक ही रूप में तीन भूमिकायें- कहना न होगा कि त्रेतायुग में दशरथ कौशल्या एवं वशिष्ठ ने माता, पिता एवं गुरु की भूमिका अदा कीं तो द्वापर में वासुदेव, नन्दराय संदीपनि देवकी यशोदा ने उक्त भूमिका अदा की। किन्तु बड़े सरकार ने एक ही साथ तीनों भूमिकायें निभायीं। १० फरवरी १९७८ को बालरुद्र सिद्धार्थ गौतम राम जी को गुरुपीठ पर आसीन कराकर बड़े सरकार ने स्वयं महादेव को नमन किया।

विधि विधिवेत्ता चक्रधारी शूलपाणी प्रभु,
नूर ज्योति लाइट हैं एक ओंकार हैं।
हरि-हर, राम, मोहन, ईशा अनेक नाम,
एक नाम सदाशिव सिद्धार्थ सरकार हैं।
सर्वमत सार सदाचार औघड़ दत्त मत,
ममता व समता के प्रेममयी थार हैं।
माँ गुरु ने नमन किया मन में आत्म रूप।
प्रणव प्रकाश गौतम 'परमार' के आधार हैं।

द्वैत राम अद्वैत बने- बाबा कीनाराम एवं बाबा कालू राम की भाँति बड़े सरकार एवं पीठाधीश्वर पूज्यपाद दोनों राम द्वैत से अद्वैत हो गये। २९ नवम्बर १९९२ को अघोरेश्वर महाप्रभु द्वारा कपाल खप्पड़ में प्रवेश एवं दाह संस्कार में उपस्थित अघोर भक्तों ने इस अलौकिक दृश्य का दर्शन किया। शोकाकुल अघोर भक्तों एवं मुखाग्नि प्रदाता सिद्धार्थ गौतम राम पड़ाव स्थित गंगा तट पर चिता का दुग्धाभिषेक कर रहे थे कि धुँआ आकार में अघोरेश्वर की आकृति बाबा गौतम राम जी को स्पर्श करती हुई अभय मुद्रा में व्योम में व्याप्त हो गई। द्वैत से अद्वैत बन गये राम। इतना ही नहीं गोपनीय वसीयतनामा भी अभिनाता प्रकट कर दी, सर्वेश्वरी समूह देवस्थानम् के अध्यक्ष पद पर बड़े सरकार की मुहर लग गयी-

औघड़ पीर मस्तान मसानी
महाकपालिक अवधूत।
धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष प्रदाता
गौतम राम अभूत।।

गुरु-गोविन्द दोनों हुए बाबा गौतम राम- क्रींकुण्ड पीठाधीश्वर, सर्वेश्वरी समूह देवस्थानम् के अध्यक्ष बाबा कीनाराम अघोर शोध एवं सेवा संस्थान, अघोर सेवा मंडल, युव जागरण मंचादि में प्रत्यक्ष भूमिका के तहत वरेण्य पूज्यपाद जहाँ गुरु ही नहीं, सद्गुरु बनकर सद्मार्ग दिखाते हुए पीड़ितों के प्रति सेवाधर्म को कर्म करार दे रहे हैं। वहीं गोविन्द-गौतम प्रभु कल्याण कर रहे हैं।

रोग, शोक, अविद्या हरेंगे दत्त कालू कीना
भूत पीड़ित जनगण बुढ़ऊ बाबा को बुलाइए।
दुविधा करेंगे दूर कामना सफल होगी,
माँ गुरु सर्वेश्वरी त्वं पाहिमाम् गाइये।
चिन्ता, चाह, मान व सम्मान मुक्ति चाहे यदि,
धूनि की विभूति माथे क्रींकुण्ड की लाइये।
आदिशंभु सिद्धेश्वर सिद्धार्थ गौतम राम नाम,
आठों याम गौतम राम चरण शरण पाइये।

अखिलेश परमार

।।औघड़ के पास आना।।

औघड़ के पास आना, दिल में ना कुछ छिपाना;
अंजली में भर के लाना, विश्वास का खजाना;
चाहे डगर हो कैसी, किंचिंत न डगमगाना;
जो चाहोगे मिलेगा, ऐसा है आशियाना;
जीवन अमूल्य थाती, भरपूर सुख उठाना;
औघड़ के पास.....
सामर्थ्य चूक जाये; निराशा जो मन पे छाये;
कहीं और ना सहारा, लगता सर्वस्वहारा;
फिर हाथ तुम उठाना, अपनी व्यथा बताना;
दिल से पुकार करना, धुनी पे गिड़गिड़ाना;
औघड़ के पास.....
समाधि का ध्यान करना, श्रद्धा से सिर झुकाना;
माँ हिंगलाज को भी, करबद्ध हो सुनाना;
निश्चित ही फल मिलेगा, चमत्कार सुख सुहाना;
मनोरथ को पूर्ण करके, झोली को भर के जाना;
औघड़ के पास.....
यहाँ प्राण वायु बहती, साँसों में भर के जीना,
औघड़ के नीर से ही, मस्ती का प्याला पीना
अमृत का स्वाद चखना, निर्भय हो मुस्कुराना
शरीर भी छूटे तो, शिव के ही लोक जाना
औघड़ के पास.....
जितना सानिध्य होगा, जीवन तुम्हें मिलेगा;
साहस, सरलता, ऊर्जा का पुष्प ही खिलेगा;
अवरुद्ध वाणी होगी; ना अवशेष कुछ भी पाना;
औघड़ कृपा जो बरसे, मस्ती में चलते जाना;
औघड़ के पास.....
औघड़ के पास.....

पृष्ठ चौथे का शेष

दोनों का ध्यान होना चाहिये। जिसको केवल अपने शरीर से मोह है वह विचलित हो सकता है पर जिसका आत्मा से भी सम्बन्ध है वह यहाँ भी मिलेगा वहाँ भी मिलेगा यही इस मिलन और संगठन का स्वरूप है। आप अपने व्यक्तित्व एवं अधिकार को समझें। ठीक से नहीं समझेंगे तो जीवन भर हताश रहेंगे।

श्री सर्वेश्वरी अपने जगह पर एक अलग संगठन है तथा समूह एक अलग संगठन है। यह दो संगठन दो विस्तृत शक्ति एक होकर सफल योनि की कामना कर रहे हैं।

संगठन की आवश्यकता घर बाहर दोनों जगह है।

यह तो कोई नया धर्म नहीं है। हमारे पूर्वज इन देवी देवताओं का पूजन कर महान शक्ति प्राप्त किये हैं। उन्हीं देवी देवताओं का पूजन हम इस धर्म में करते हैं। आप सुन चुके होंगे दुर्गासप्तशती में कि सभी देवी देवताओं के शरीर से जो शक्ति प्रस्फुटित हुई उसी ने महान शक्ति का रूप धारण कर लिया जिससे असुरों का संहार किया। उसी प्रकार आप संगठित होकर चलें। संगठन की आवश्यकता घर बाहर दोनों है। घर में भी संगठन नहीं रहता तो बड़ा विक्षोभ पैदा होता हैं आप अपना विश्वास अपने घर परिवार में दें और विश्वास प्राप्त करें नहीं तो लवण के बिना फीके व्यंजन की तरह जीवन फीका बीतेगा।

समूह का आज यह उत्सव विभिन्न प्रान्तों, जिलों के शाखा कार्यालयों में भी मनाये जा रहे हैं। इसलिये आज सर्वेश्वरी अलग हो गयी है और समूह अलग हो गया है। सर्वेश्वरी घर-घर में घुस गयी है और समूह आपके सामने है।

समूह एक मित्रों गोल (दल) सा है जिसमें आप उलझे चित्त को लेकर बैठते हैं, परामर्श करते हैं तथा आपस की कठिनाईयों तथा दु:खों का निवारण करते हैं। उसी के बृहद रूप में यह समूह है। राजनैतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक तथा अन्य लोग संसार से परेशान एवं घबड़ा कर यहाँ आते हैं और इस वृक्ष के नीचे शीतल छाया मिलती है। असल बात यह है कि इससे सम्बन्ध रखना एक मित्र रखने के समान है जिससे कि एक सहारा प्राप्त कर सके। आप लोग तुलसीकृत रामायण में सुन चुके होंगे कि दु:ख घटत है कहन सुनन से भी।

परिश्रम का दान फलता है, लूट का नहीं

अघोरेश्वर महाप्रभु बाबा भगवान रामजी का आशीर्वचन

धर्मबन्धुओं!

मैं देखता हूँ आपका संघ बहुत आगे बढ़ा है। आपका साहस बढ़ा है। मैं आशा करता हूँ आप अपने विचार को समाज के सामने रखने में संकोच नहीं करेंगी। जिन गायत्री, कौशकी, कात्यायनी, अरून्धती देवी, शक्ति का महर्षियों ने गीत गाया है, उन महर्षियों से उनका सम्बन्ध था। आपके देव, आपके पति है। जहाँ आप इनके साथ शुभ संकल्प करती है। वह बहुत महान है, बड़ा है। आप लोगों के शुभ संकल्प से ही तो तिलक दहेज का भाव गिर गया है। इंजीनियर, डाक्टर का भाव भी गिरता जा रहा है। ओवरसीयर का रेट तो तीन चार हजार रह गया है। दाल, सब्जी, आटा की तरह इनका भाव गिरता जा रहा है। आज दर्जा दस-बारह पास की तो बुरी दशा है। कोई काम नहीं। साइकिल से घर से बाहर, बाहर से घर घूमते रहते हैं। बुरी हालत है। हमें तो ऐसा मालूम पड़ता है। कहीं वे दरिद्र न हो जाये। एक सज्जन को मैंने कहा था शादी स्वजातीय के यहाँ करने को तो तिलक दहेज कम मिलने के कारण नहीं किया। बाद में वह इतना गिर गया कि तिलक तो मिला ही नहीं, उसकी शादी भी अपनी जाति में नहीं, एक कलवारिन से हुई। आपका प्रयाग में यह संकल्प (तिलक दहेज के विरोध का) बहुत पुनीत है। अगर आप लोग घर-घर में इस तिलक-दहेज का विरोध करने लगे तो आपके सामने यह बात करने की किसी की हिम्मत नहीं होगी, यह कहने की कि मैंने इतना तिलक लिया है।

सूद लोग खाते हैं, सूद खाने वाले लोगों का मन मस्तिष्क गिर जाता है। किसी का दु:ख, तकलीफ में जब हम सहयोग करते हैं तो उस धन के बदले सूद लेना या उससे कुछ अपेक्षा करना पतन का कारण है। शूद्र लोग सूद जाते हैं। भारतीय संस्कृति में भी सोना लेना, सोना देना पाप हैं। सोना खो जाने पर उतना सोना दान करने पर फल होता है। ऐसा शास्त्रों में है। सोना पाना भी बुरा है। सोना पाने पर अपना सोना मिलाकर दान करना पड़ता है। तब फल होता है। सोना से मनुष्य का मन भी गिर जाता है। सोना रखने से डर लगता है। आप डर से बाहर नहीं जा सकती। कहीं बाहर घूम-फिर नहीं सकती। आप हमेशा डरती रहती हैं।

आप अपने केशों की तरह संस्था को संवारती रहें। जैसे अपने केशों को संवारती हैं वैसे ही अगर संस्था को संवारती रहे तो आपका संकल्प बहुत जल्दी फलने फूलने लगेगा तथा सौदेबाज लोगों का पतन अवश्यम्भावी है। आप अपने केश को संवारने, बांधने, गूंथने का काम जैस करती हैं, वैसे ही संस्था करें तो फल अवश्य होगा।

पहले गायत्री की ही पूजा होती थी। ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि देवता की पूजा नहीं होती थी। कुल देवता हमारे यहाँ देवियाँ हैं। कुल से कुजात काढ़े गये लोग देवताओं का बंटवारा किये हैं। जब कुल से बहिष्कार हुआ तो, जब उन्हें बंटवारे में देवता नहीं मिले तो ब्रह्मा, विष्णु, शिव को अपना देवता मानने लगे। शिव बहुत उग्र देवता थे। हिमालय के थे। वे अपने ससुरार को मारे थे। इसलिए उन्हें वीर समझ कर अन्य देव अपने से श्रेष्ठ माने।

ऐसा करते करते आठ सौ वर्ष मुस्लिम पीरियड में अवतारवाद रामानन्द जी के समय से चला है। उसके पहले सभी को नारायण मंत्र ही दिया जाता था। रामानन्द का यहीं इलाहाबाद में ब्राह्मण कुल में जन्म हुआ था। उन्होंने एक मत चलाया। सबों को कण्ठी बंधवाया, गुरुमुख बनवाया। चाहे चमार हो या भंगी यदि गुरुमुख है, कंठी वाला है तो पांत में बैठेगा। उन्होंने देखा तो सब चयन हो जायेंगे। उन्होंने वैष्णव आन्दोलन चलाया। उसी आन्दोलन में नाभा, दादू, कबीर, पलटू, रविदास, कूबा, बोधा, धना, पीपा, टोका आदि सभी थे। नाभा गेम थे, कूबा कुम्हार थे और रविदास चमार थे परन्तु जाति का भेदभाव नहीं रखकर हर जात के लोगों को एक सूत्र में बांधकर उन्होंने एक पंगत की व्यवस्था देकर सबको एक करने का प्रयास किया। उस परिस्थिति में हर वर्ग हर जाति ने एक-एक नेता उत्पन्न किया। निर्गुण ब्राह्मण भी पंगत में नहीं बैठ सकता था और सगुणा चमार भी पंगत में बैठता था। वैष्णव आन्दोलन से अवतारवाद चला उस वैष्णव आन्दोलन की शाखा में तुलसीदास जी हैं। मंदिर, मूर्ति पूजा पद्धति जो है, वह तो जैसे हमारी छोटी नन्हीं मुन्नी लड़कियाँ कनियाँ, पुतरी खेलते-खेलते एक दिन खुद कनिया हो जाती है। मनुष्य मूर्ति रूप तो खुद ही होता है। सन्यासी लोगों के लिये मूर्ति पूजा का तो विधान नहीं है। वे जब मूर्ति पूजते हैं तो दूसरे जन्म में कौवा या कुत्ता होते हैं और मूर्तियों पर वीट या पेशाब करते हैं। क्योंकि ब्रह्म तो सर्वव्यापक है। उसे मूर्ति, मंदिर के संकुचित दायरे में करके उसका अपमान करते हैं। इसलिये प्रायश्चित रूप से दूसरे जन्म में पेशाब और बीट करते हैं। ये जल भुनकर ऐसा करते हैं उनके लिए मूर्ति पूजा का परहेज है, आपके लिये नहीं। पंजाबी महिलायें ध्यान धारण, योग की ओर अधिक ध्यान देती हैं। आप लोग भी यही सब करें। निरर्थक बातों की ओर ध्यान न दें। निरर्थक बातें बोझ हैं जो ग्रन्थ अच्छी बातें बतावें, जिससे ज्ञान बढ़े ऐसी ही ग्रन्थ पढ़ें। ग्रन्थ के शकल में ही कबीर, तुलसी, नानक, वशिष्ठ जीवित हैं। ये सभी पुस्तक बन गये हैं। ये अपने लोग हैं। उनका अमरत्व वाणिये है।

अपने में पूर्ण तभी होंगे जब अन्तर के देवता के संकेत पर ध्यान देंगे

धर्मबन्धुओं!

मैं आपसे यही कहूँगा कि जो अपने आत्मा का आवाज है। संकेत है उस पर आचरण करें। मन की बातों से, मन के बताये मार्गों के तरफ चलने से जीवन दूषित होगा। बहुत कमी महसूस होगी। ऐसी कमी महसूस न करें। अपने में पूर्ण तभी मालूम होगा, जब अन्तर के देवता के संकेत पर ध्यान देंगे। हम सब में वह देवता है। संकेत होता है। बुरा भला कर्म करने के पहले आवाज होती है। उस समय यह अवश्य सोचना चाहिये, उन आवाजों को कि यह आत्मा की आवाज होगी तो वह साहस, प्रतिभा, व्यक्तित्व लायेगा। आप जीवन में मन की आवाज पर चलने से परेशान होते हैं। मन गिर जाता है। अपराध कर्म से अपराधी लोगों के साथ शैतान लगा रहता है। हजारों मील दूर चले जाते हैं, पीछा नहीं छोड़ता। अपराध हो जाता है, उसका चिन्तन परित्याग करें। बीता भूत को ध्यान न दें। बड़ा दु:खद है। महाभारत में देखें होंगे, पढ़े होंगे। युधिष्ठिर भाईयों के साथ गलने के लिए हिमालय पर जाते हैं। बारी-बारी से एक-एक भाई गलने लगे। युधिष्ठिर आगे आगे चले जा रहे हैं। पीछे से भाई लोग आवाज देते हैं कि अमुक भाई गल रहा है। चला नहीं जाता, कष्ट है, पीड़ा है। युधिष्ठिर को इन बातों को सुनने की फुर्सत नहीं। कहते हैं कि मुझे कुछ भी सुनाई नहीं दे रहा है। पीछे मुड़कर देखने का समय नहीं है। आगे बढ़कर बताओ क्या बात है। वह अपने लक्ष्य की ओर बढ़ता जाता है। पीछे मुड़कर देखता नहीं है। इसी प्रकार जीवन में बीते क्षण को भुलाकर भविष्य को उज्जवल बनायें। भूत की पूजा न करके जो जीवन में पवित्रता है, साहसी, प्रतिभाशाली प्रेरणा उनकी तरफ आचरण करने की सत् चेष्टा करें। इनसे बड़ी प्रसन्नता, खुशी होगी। स्वस्थ चित्त में खेद नहीं होगा। व्यवहार, आचरण करेंगे तो अन्तर का देवता संकेत देगा। समझेंगे। अच्छे आचरण की प्रेरणा दत्तचित्त होकर, जैसा हम लोग समतल भूमि पर बैठकर थोड़ा क्षण सोचते हैं, ऐसा चौबीस घंटे में दस मिनट शान्तचित्त होकर आत्मा का अनुसंधान करें। जीवन परम पवित्र, स्वस्थ होगा। जो कुछ कहा है, थोड़ी देर शान्त, स्वस्थ चित्त होकर ठीक से मनन करेंगे तो कल्याणकारी होगा। दार्शनिक नहीं है, व्यवहारिक वस्तु है। आचरण में, व्यवहार में लाकर ही प्राप्त कर सकते हैं। आप सभी लोगों को धन्यवाद देता हूँ।

संगठन की आवश्यकता घर बाहर दोनों जगह है।

धर्मबन्धुओं!

पूज्यपाद अवधूत भगवान राम जी ने कहा हैं कि शरीर ईश्वर और सामाजिक दोनों तत्त्वों को प्राप्त करने का साधन है, ईश्वरी तत्व की प्राप्ति शरीर का पालन करके ही की जा सकती है। शरीर कमजोर होने पर मन कुत्सित और कमजोर हो जाता है। ऐसे क्षीण मन से क्या प्राप्त किया जा सकता है। शरीर और आत्मा

शेष पृष्ठ तीन पर

अघोर सूत्र

☞ **जिसके साथ जैसा व्यवहार जो करता है, उसके साथ वैसा व्यवहार होना सुनिश्चित है। कर्म पीछे-पीछे घूमता है। किसी को भी नहीं छोड़ता। ईश्वर हो, चाहे ईश्वर के प्रतिनिधि हो। चाहे भगवान हो।**

अघोरेश्वर महाप्रभु बाबा भगवान रामजी